मंशाराम

पराग मांदले

मंशाराम

'मंशाराम साइकिल पर दफ्तर आता है।'

सबसे पहले जब यह जुमला सुना था मैंने, मुझे बड़ी कोफ्त हुई थी।

https://www.hindiadda.com/mansharam/

इस कोफ्त की कई वजहें थीं। एक तो सुबह घर से निकलते समय पत्नी से झगड़ा हो गया। महीने की पंद्रह तारीख को वह तनख्वाह खत्म हो जाने का रोना रो रही थी। बस में भेड़-बकरियों की तरह ठूँसे जाने और आगे बढ़ने के लिए एक इंच जगह न होने के बावजूद 'आगे बढ़ो' का नारा लगा रहे कंडक्टर से तनातनी हो गई। और सबसे बड़ी बात यह कि तब मुझे यह नहीं पता था कि मंशाराम कौन है।

होगा कोई चपरासी, मेरा ख्याल था। साइकिल पर दफ्तर और भला कौन आता है?

अब यदि मंशाराम साइकिल पर दफ्तर आता है तो इसमें इतना आश्चर्य व्यक्त करने की क्या वजह है?

मैं मानता हूँ कि 'मंशाराम साइकिल पर दफ्तर आता है' इस जुमले से कोई आश्चर्य व्यक्त नहीं हो रहा था, मगर वह आश्चर्य उस समय भूरेलाल के चेहरे पर पूरी तरह से अभिव्यक्ति पा रहा था।

भूरेलाल मेरा चपरासी था।

'तुम भी तो रोज साइकिल पर ही दफ्तर आते हो।' जब मैंने भूरेलाल को कुछ हिकारत भरी निगाहों से देखते हुए यह बात कही तो उसके चेहरे पर जो भाव उभरा, वह किसी महामूर्ख से पाला पड़ जाने पर उभरने वाला भाव था। सच कहूँ तो वह भाव इतना स्पष्ट था कि उसे पकड़ने में मुझे जरा भी समय नहीं लगा था। आगबबूला होकर मैं कोई तीखी बात कहने ही वाला था, मगर इससे पहले ही भूरेलाल ने एक सवाल मेरी ओर दाग दिया, 'क्या आप जानते हैं साहब कि मंशाराम कौन है?'

यह सवाल करते हुए भी उसके चेहरे का वह भाव बरकरार था। उसके इस दुस्साहस पर मैं थोड़ा चौंका। अवश्य कोई बात है, मैंने सोचा। वरना मेरे साथ इस तरह बात करने की इसकी हिम्मत नहीं हो सकती थी। सूचना का युग था। अफवाहों से भी ज्यादा तेज गति से चारों ओर फैलती थीं सूचनाएँ। इस युग में जिसके पास सबसे ताजी सूचना होती है, वही सबसे अधिक योग्य कहलाता है। जरूर कोई ऐसी बात है जिसे मैं नहीं जानता। उसी के बल पर यह दो कौड़ी का आदमी इतनी दिलेरी दिखा रहा है। मुझे यह समझने में कोई देर नहीं लगी।

भूरेलाल के सामने अपनी हेठी कराने को मैं राजी नहीं था। इसलिए सवाल मैंने उससे फिर भी नहीं पूछा। मगर मेरा चेहरा खुद पूरा सवाल बन गया था। भूरेलाल चाहता तो कुछ देर और मेरी खिंचाई कर सकता था, मगर वह व्यावहारिक व्यक्ति था।

जानता था, कुछ पलों के लिए चाहे वह मुझसे पंगा ले ले मगर आखिर उसे मेरे साथ ही गुजारा करना है। सो उसने रहस्य से परदा उठा ही दिया। 'साहब! मंशाराम हमारे नए निदेशक का नाम है। मंशाराम कोहली, मतलब एम.आर. कोहली।'

पूरी तरह से किसी रहस्योद्घाटन के लिए तैयार होने के बावजूद मैं कुर्सी से गिरते-गिरते बचा। मुझे जोर का झटका बहुत जोर से लगा था। दो वजहें थीं। पहली तो यह कि मैंने कभी यह सोचा ही नहीं था कि इतने बड़े अधिकारी का नाम इस प्रकार का भी हो सकता है। मंशाराम, दाताराम, भूलेराम, सेवकराम - इस प्रकार के सभी नाम आज के समय में अधिकांशतः चपरासी किस्म के लोगों के ही होते हैं या ज्यादा से ज्यादा बाबुओं के। अधिकारी का रोब जितना उसके पद का होता है, उससे ज्यादा उसके नाम का होता है। यह तो बहुत ही पुराने फैशन का नाम था। दूसरी वजह बहुत जोर का झटका देने वाली मुख्य वजह थी। मैं सपने में भी नहीं सोच सकता था कि निदेशक स्तर का अधिकारी कभी साइकिल पर भी आ सकता है। यह तो बिलकुल अनहोनी वाली बात थी। ऐसे कार्यालय में जहाँ सहायक निदेशक स्तर का अधिकारी भी स्कूटर से आने में शर्म का अनुभव करता हो, कार्यालय का सबसे बड़ा अधिकारी साइकिल पर आए। यह तो उतनी ही असंभव किस्म की बात है, जितना असंभव है सूरज का शीतलता प्रदान करना।

जरूर वह या तो संत है या फिर महाढोंगी। मेरे मन में सबसे पहली प्रतिक्रिया यही हुई थी। कारण साफ था। कार्यालय के निदेशक को दफ्तर आने-जाने के लिए सरकारी गाड़ी मिली हुई थी। सफेद एंबेसेडर। सरकारी गाड़ी, जिसका उपयोग सरकारी कामों को छोड़कर तमाम घरेलू और व्यक्तिगत कामों के लिए अधिकारियों द्वारा बेधड़क किया तथा कराया जाता रहा है, और निश्चय ही किया व कराया जाता रहेगा। तब तक, जब तक सूरज-चाँद रहेगा। ऐसे में निदेशक महोदय का दफ्तर साइकिल पर आना उन बातों की तरह था जो सहजता से तो क्या मुश्किल से भी नहीं हजम हो पातीं। कोई न कोई घपला-घोटाला-रहस्य अवश्य है। मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं था।

कुछ वक्त गुजरा। मैं पूरे विश्वास से नहीं कह सकता कि उसे रहस्य से परदा उठना समझा जाए अथवा नहीं मगर कुछ बातें निदेशक महोदय के कमरे से छनकर आईं। जो बातें आईं, उनमें निदेशक महोदय के साइकिल पर आने का कारण भी तथाकथित रूप से शामिल था। जो कारण स्वयं निदेशक महोदय के मुखारविंद से उच्चरित हुआ, वह यह था कि उनका सरकारी बँगला दफ्तर से मात्र दो किलोमीटर

की दूरी पर स्थित था। एक तो वे इतनी-सी दूरी के लिए सरकारी गाड़ी का उपयोग करना फिजूलखर्ची समझते हैं, दूसरे वे स्वयं को चुस्त-तंदुरुस्त रखने को लेकर अत्यधिक सजग-सचेत किस्म के व्यक्ति हैं। सो साइकिल पर आने से उनके दोनों उद्देश्य पूरे हो जाते हैं। और जो बात उन्होंने कही नहीं मगर हर सुनने वाले ने सुन और समझ ली, वह यह कि इससे मुफ्त का प्रचार मिल जाता है सो अलग।

धत् तेरे की। मैंने सोचा। खोदा पहाड़, निकली चुहिया। कहाँ मैं किसी घपले-घोटाले-रहस्य की उम्मीद कर रहा था और कहाँ उसका यह फुदनी-सा कारण निकला। हाँ, मुफ्त प्रचार वाली बात में कुछ दम अवश्य हो सकता है। कुछ लोगों में होती है खब्त इस तरह की। लोग चर्चा में रहने के लिए और प्रचार पाने के लिए क्या-क्या नहीं करते हैं। मगर फिर भी इस बारे में सोचकर मुझे कोफ्त ही हुआ करती थी। यह भी कोई बात हुई? वह अधिकारी ही क्या जो विभिन्न तरीकों से अपने मातहतों पर रोब न गाँठ सके। अब साइकिल पर दफ्तर आने जैसी टुच्ची हरकतों से कोई सस्ता प्रचार अवश्य पा ले, मगर किसी तरह रोब नहीं गाँठ सकता।

मगर फिर भी मंशाराम न सिर्फ मुझ पर, बल्कि पूरे दफ्तर पर रोब गाँठने में कामयाब हो गए। इस सिलसिले के शुरुआत की कहानी भी बड़ी दिलचस्प है। हुआ यह कि एक दिन मंशाराम छठे तल्ले पर स्थित हमारे कार्यालय से किसी बैठक में हिस्सा लेने जाते हुए लिफ्ट से नीचे उतर रहे थे। लिफ्ट में दो लोग और भी थे जो मंशाराम को पहचानते नहीं थे। उनमें से एक व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति से हमारे कार्यालय की चर्चा करते हुए कहा कि इस कार्यालय में तो कोई भी काम बिना रिश्वत दिए होता ही नहीं है। उसने यह भी कहा कि अभी-अभी वह किसी कर्मचारी को अपना काम कराने के लिए पाँच हजार रुपए देकर आ रहा है।

मंशाराम के कान खड़े हो गए। उन्होंने उस व्यक्ति से कहा कि उन्हें भी अपना कुछ काम निकलवाना है। इसलिए यदि वह उन्हें उस कर्मचारी से मिला देगा तो उसका बहुत उपकार होगा। बैठे-ठाले किसी व्यक्ति पर उपकार करने और उस कर्मचारी की निगाहों में अपने नंबर बढ़ जाने की संभावना से प्रमुदित वह व्यक्ति सीधे मंशाराम को लेकर उस कर्मचारी के पास जा पहुँचा और उससे बोला कि ये सज्जन भी अपना कुछ काम कराना चाहते हैं और उसके लिए मनमाफिक चढ़ावा चढ़ाने के लिए भी तैयार हैं। उस कर्मचारी के होश तुरंत साथ छोड़ गए। इसके बाद का कुल किस्सा यह कि पुलिस आई। कर्मचारी की मेज की दराज से पाँच हजार रुपए भी बरामद हो गए। उधर दहशत में आया रिश्वत देने वाला तुरंत सही-सही गवाही के लिए तैयार हो

गया। परिणाम यह हुआ कि उस कर्मचारी को पुलिस ने अपने यहाँ लंबी शरण देने का निश्चय कर लिया।

इस घटना से मंशाराम की धाक पूरे कार्यालय पर जम गई। इसके बाद कार्यालय में एक बैठक आयोजित की गई। उस बैठक में मंशाराम ने सभी लोगों को चेतावनी दी कि उनके रहते इस कार्यालय में कोई भी रिश्वत लेने का या किसी भी प्रकार से भ्रष्टाचार करने का ख्याल भी न करे। और करे तो इसका परिणाम भुगतने के लिए भी तैयार रहे। मंशाराम ने यह भी कहा कि कोई भी अधिकारी या कर्मचारी इस गलतफहमी में न रहे कि उनकी नजर से बचाकर कोई किसी भी तरह का भ्रष्टाचार कर सकता है। शोले के असरानी की शैली में उनके कहने का अर्थ यही था कि हमारे आदमी चारों तरफ फैले हुए हैं।

लेकिन इतने भर से मंशाराम की बेचैन आत्मा को चैन मिलने वाला नहीं था। सो वे केवल चेतावनी देने तक ही सीमित नहीं रहे। इसके बाद कार्यालय में कुछ नियम सख्ती के साथ लागू किए गए। अब तक वहाँ पर अपनी खाला का घर समझकर आने वाले तमाम बाहरी लोगों की कार्यालय में बेरोकटोक आवाजाही पर प्रतिबंध लगा दिया गया। लोगों की शिकायतों और सुझावों के लिए रिसेप्शन पर एक पत्र-पेटी लगा दी गई। इस पेटी को हर सप्ताह स्वयं मंशाराम की उपस्थिति में खोला जाता था और वे स्वयं उसमें आने वाले सभी सुझावों और शिकायतों को पढ़ते थे और उनके अनुरूप कार्यवाही के आदेश देते थे। इसके अलावा अधिकारियों के साथ मिलने का भी एक समय तय कर दिया गया। बेवजह कार्यालय से बाहर निकलकर चाय या पान की दुकान पर अड्डा जमाने वाले और वहीं पर सारी सेटिंग करने वाले कर्मचारियों पर निगाह रखी जाने लगी।

मंशाराम ने एक नई परंपरा भी शुरू की। कार्यालय में पहली बार साप्ताहिक बैठकों का आयोजन किया जाने लगा। उन बैठकों में सभी लोगों को अपने-अपने विचार और सुझाव रखने की स्वतंत्रता थी। मंशाराम शांति के साथ सभी की बातें सुनते और जहाँ आवश्यक होता, हस्तक्षेप भी करते। कोई अच्छा सुझाव आता तो तुरंत उस पर अमल के लिए आदेश जारी हो जाते। कर्मचारियों की कई समस्याओं का निपटारा भी इन बैठकों में हो जाता।

मंशाराम ने अपने तरीके से कार्यालय के पूरी तरह से ईमानदार कुछ लोगों की पहचान की और उन लोगों को प्रत्यक्ष रूप से कार्यालय के दैनिक कामकाज को सुचारु रूप से चलाने और नीति-निर्धारण के मामले में महत्व दिया जाने लगा।

इसके परिणामस्वरूप ईमानदारी से काम करने में विश्वास करने वाले लोगों को लगने लगा कि भ्रष्टाचार का गढ़ कहलाने वाले उनके कार्यालय में आखिर सतयुग का प्रकाश दिखाई देने लगा है। व्यवस्था में सुधार की उम्मीद को पूरी तरह से त्याग चुके लोगों ने भी अपनी धारणा बदलनी शुरू कर दी। ऐसे लोग आपस में बातें करते हुए इस बात को स्वीकार करने लगे कि यदि सर्वोच्च अधिकारी चाहे तो व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन संभव है।

मंशाराम का कार्य करने का तरीका भी और लोगों से बहुत अलग तरह का था। उनके पूर्ववर्ती अधिकांश निदेशक साल में मुश्किल से एकाध बार ही कभी कार्यालय के अन्य विभागों का दौरा करते थे। सारा समय वे अपने केबिन में ही सीमित रहते थे। यदि उन्हें किसी अधिकारी से कोई काम होता तो उसे वे अपने केबिन में बुलाने का निर्देश अपने पी.ए. को देते। कुछ बड़े अधिकारियों को छोड़ सामान्यतया उनके केबिन में जाने की हिम्मत कोई और अधिकारी या कर्मचारी नहीं कर पाता था। कार्यालय के अधिकांश कर्मचारियों के साथ उनका कोई प्रत्यक्ष या सीधा संबंध नहीं होता था। उनके कार्यालय में आते या बाहर जाते समय यदि कोई उन्हें नमस्कार करता तो ज्यादातर निदेशक मात्र सिर हिला दिया करते थे। सामान्य कर्मचारियों और छोटे अधिकारियों के साथ किसी प्रकार की बोलचाल रखना उन्हें अपने पद की गरिमा के प्रतिकूल प्रतीत होता था।

मगर मंशाराम उन सबके बिलकुल उलट थे। अपने केबिन या सीट से चिपके रहना उन्हें नापसंद था। उन्हें यदि किसी अधिकारी से कोई काम होता तो वे उठकर सीधे उसके कमरे में पहुँच जाते। वह बेचारा हड़बड़ाकर अपनी सीट से उठने की कोशिश करता तो उसे वापस बैठा देते और फिर उसके सामने की सीट पर बैठकर उससे चर्चा करने लग जाते। वहाँ से उठने से पहले वे उस अधिकारी के साथ दो-चार व्यक्तिगत बातें करना और उसके घर-परिवार के हाल-चाल पूछना कभी न भूलते। कई काम वे संबंधित विभाग में स्वयं बैठकर कराते। उस दौरान वहाँ उपस्थित हर व्यक्ति से वे उसकी राय और सुझाव लेते। जो बात पसंद आ जाती, उस पर तुरंत अमल भी करते।

कार्यालय के किसी भी अधिकारी या कर्मचारी को कोई समस्या होती तो वह बिना कोई पूर्व अनुमति लिए मंशाराम से मिलने के लिए स्वतंत्र था। मंशाराम हर कर्मचारी की बात बड़े ध्यान से सुनते और उसकी समस्या के समाधान के लिए सदा तत्पर रहते। यहाँ तक कि अनेक कर्मचारियों की निजी परेशानियों के समाधान भी वे खुशी-खुशी करने के लिए तैयार रहते। कार्यालय के किसी भी कर्मचारी के सामने

पड़ने पर कई बार मंशाराम खुद उसे नमस्कार करते। परिणाम यह होता कि सामने वाला कर्मचारी पानी-पानी होकर उनके पाँवों में बिछ जाने का प्रयास करने लगता।

कार्यालय के किसी भी अधिकारी या कर्मचारी को मंशाराम कोई कार्य सौंपते और यदि वह उसे अच्छे ढंग से निर्धारित समय-सीमा के भीतर पूरा कर लेता तो अगले ही दिन उस व्यक्ति की टेबल पर मंशाराम के हस्ताक्षरों से युक्त एक प्रशंसा-पत्र पहुँच जाता। परिणाम यह होता कि वह अधिकारी या कर्मचारी अगली बार और अधिक मेहनत करके मंशाराम का बताया कार्य जल्दी से जल्दी पूरा करने का प्रयास करता।

जन-संपर्क वाला कार्यालय होने के कारण बहुत से लोगों का कार्यालय में आना-जाना होता था। मंशाराम ने कार्यालय में आने वाले हर पत्र का समुचित उत्तर देने और उस पर कार्यवाही करने के लिए एक अवधि निर्धारित कर दी थी। इसके अलावा एक स्थिति रिपोर्ट हर विभाग को हर सप्ताह मंशाराम को देनी होती थी। मंशाराम उस रिपोर्ट का अवलोकन करने के पश्चात उसे स्वागत-कक्ष में भेज देते, जहाँ से कोई भी व्यक्ति अपने मामले की स्थिति की जानकारी प्राप्त कर सकता था।

चारों ओर मंशाराम की जय-जयकार हो रही थी। यूँ प्रभावित मैं भी कम नहीं था, मगर मेरी दृष्टि ही काली थी तो कोई क्या कर सकता है? मंशाराम के प्रयासों का बेहद प्रशंसक और मुरीद होने के बावजूद कुछ बातें मुझे खटक रही थीं। जो बातें मुझे खटक रही थीं उनमें सबसे मुख्य बात यह थी कि दफ्तर के तौर-तरीकों में भारी बदलाव हो जाने के बाद भी दफ्तर का चेहरा-मोहरा वही था। सारी व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन कर देने के बावजूद मंशाराम के आने के पहले जो जहाँ था, अब भी वह वहीं पर था।

बात बहुत साफ थी। कार्यालय के कुछ विभाग ऐसे थे जिनका शुमार मलाईदार विभागों में किया जाता था। मंशाराम के पहले वाले निदेशक महोदय के संरक्षण में ऐसे दुधारू गाय रूपी विभागों से ज्यादा से ज्यादा दूध दुहने की क्षमता रखने वाले अधिकारियों को उन विभागों का ग्वाला बना दिया गया था। ऐसे ग्वालों ने दुहने की अपनी क्षमता का भरपूर प्रदर्शन मंशाराम के आने से पहले ही करके अपने चयन को सार्थक साबित कर दिया था। मुझे जो बात सबसे ज्यादा खटकती थी वह यह कि ऐसे लोग अब भी उन्हीं जगहों पर कब्जा जमाए बैठे हुए थे। उनकी गतिविधियाँ ऊपरी तौर पर सतर्कता से भरी होने के बावजूद मेरे जैसे दूर की ताड़ने वाले के लिए अभी

भी सशंकित करने वाली थीं। मंशाराम को इस बात की जानकारी न हो, यह बात मेरे गले से उतरती नहीं थी।

हालाँकि मैं जब भी मंशाराम को देखता, मुझे अपने-आप पर शर्म आने लगती कि आखिर क्यों मैं इस देवता समान व्यक्ति पर भी अपनी काली निगाहें गड़ाए रहता हूँ। मगर फिर भी बाल की खाल निकालने की अपनी बुरी आदत से बाज आने के लिए मैं खुद को राजी नहीं कर सका। इस काम में मैंने अपने चपरासी भूरेलाल को भी शामिल कर लिया। आखिर इस कार्यालय में दस साल तक काम करके मुझे इस बात का बोध हो चुका था कि किसी भी कार्यालय में चपरासियों से ज्यादा पहुँच वाला दूसरा कोई शख्स होना संभव नहीं है। इस मामले की तह तक पहुँचाना मेरे जैसे संसाधन-संपर्कविहीन व्यक्ति के लिए चाहे संभव न हो, मगर हर स्तर पर अपनी पहुँच होने के कारण भूरेलाल के लिए बिलकुल भी मुश्किल नहीं था।

मामले की तह तक मैं पहुँच गया, यह कहना बिलकुल उचित नहीं है। मगर इस कोशिश में जो रहस्योद्घाटन हुआ, वह मेरे जैसे निर्लज्ज व्यक्ति के पैरों के नीचे से भी जमीन खिसकाने के लिए पर्याप्त था। एक दिन भूरेलाल ने जो कुछ मुझे आकर बताया, उससे मुझे तुरंत उस रिश्वतखोर व्यक्ति की कहानी याद आ गई, जिससे परेशान होकर राजा ने उसे लहरें गिनने के कार्य में लगा दिया था। यह सोचकर कि इस काम में तो रिश्वत लेना किसी भी तरह से संभव नहीं होगा। मगर वह उर्वरबुद्धि व्यक्ति वहाँ भी बाज नहीं आया। लहरों की गिनती बिगड़ने और राजा के रुष्ट होने का भय दिखाकर उसने वहाँ नाव लेकर आने वाले नाविकों से भी रिश्वत वसूलनी शुरू कर दी।

कुछ ऐसा ही किस्सा हमारे कार्यालय में भी चरितार्थ हो रहा था। मंशाराम की तमाम कोशिशों और सख्ती के बावजूद। भूरेलाल ने बताया कि कार्यालय में अपना कोई काम कराने के लिए आने वाले लोगों से दक्षिणा वसूलने का कार्य थमा नहीं है। बल्कि मंशाराम की सख्ती के बाद हर काम के लिए ली जाने वाली दक्षिणा की राशि में भी भारी वृद्धि हो गई है। इस भारी वृद्धि की एक वजह तो यह बताई गई कि मंशाराम की सख्ती की वजह से इस काम में खतरा बहुत बढ़ गया था। दूसरी वजह ऊपर जाने वाले चढ़ावे में बढ़ोत्तरी होना थी। दूसरी वजह ठीक तरह से मेरी समझ में नहीं आ पाई। या साफ-साफ कहूँ तो चढ़ावा ऊपर कहाँ जाता है, यह मैं समझ नहीं पाया।

जब मैंने मामले की गहराई में जाने की ठान ही ली तो कुछ हाथ-पैर और मारे। इस प्रयास में जो बात सामने आई वह और भी विस्मय में डालने वाली थी। मुझे पता चला कि कुछ लोगों ने इस बात की शिकायत लिखकर रिसेप्शन पर लगी पत्र-पेटी में भी डाली थी। मगर मैं जानता था कि मंशाराम की तरफ से इस मामले में कोई कार्यवाही नहीं हुई थी। न ही उस तरह की कोई चर्चा मैंने सुनी थी। इसका अर्थ यह था कि मंशाराम द्वारा हर सप्ताह के एक निर्धारित दिन अपने सामने पत्र-पेटी खुलवाने के पहले ही कोई उसमें से ऐसी शिकायतों को गायब करा देता था। मुझे मानना पड़ा कि कानून के हाथ चाहे आज बहुत छोटे हो गए थे मगर कानून के साथ बलात्कार करने वालों के हाथों की लंबाई इतनी हो गई थी कि उन्हें नापना ही संभव न हो।

कुत्ते की टेढ़ी पूँछ से अपनी तुलना होने की आशंका होने के बावजूद मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने भी इस मामले की तह तक जाने के अपने इरादे से पीछे न हटने की कसम खा ली थी। सवाल बहुत से खड़े हो गए थे। मंशाराम के आने और व्यवस्था में भारी बदलाव के बावजूद मलाई पीटने वाले लोग अपनी जगह क्यों टिके हुए थे? ऐसे लोग ऊपर किस व्यक्ति तक अपनी दक्षिणा पहुँचाते थे? और शिकायत व सुझाव पेटी में से ऐसे लोगों की शिकायतों को कौन और कब गायब करा दिया करता था? बहुत दिनों तक मैं इस रहस्य पर से परदा उठाने के लिए हाथ-पैर मारता रहा। मगर मेरे हाथ कुछ खास लगा नहीं।

मैं निराश जरूर था मगर पूरी तरह से हताश नहीं था। असफलताओं के बावजूद मैंने अपना इरादा छोड़ा नहीं था। मगर हाथ कुछ भी न आने के कारण कुछ दिनों के लिए मैं ठंडा होकर जरूर बैठ गया था। फिर भी मुझे पूरी उम्मीद थी कि मेरी कछुआ-रफ्तार कोशिशों का कोई ना कोई नतीजा जरूर निकलेगा। मगर एक दिन अचानक ये सारी कोशिशें बेमानी हो गईं या कहूँ कि अनावश्यक हो गईं। उस सुबह समाचार-पत्र के पहले पन्ने पर मोटे-मोटे अक्षरों में छपी एक खबर ने मेरे होश उड़ा दिए - मंशाराम के घर सी.बी.आई. का छापा। दस करोड़ बरामद।

—— X ——